कश्मीर विवादः उत्पत्ति और विकास
(Kashmir Dispute:Genesis &Progression)

भूमिका (Introduction)— लगभग 200 वर्षों तक अंग्रेजों की यातना भरी दासता के बाद 14 अगस्त, 1947 की मध्य रात्रि को जैसे ही घड़ी ने 12 बजाये चारों ओर '15 अगस्त जिन्दाबाद' आदि जैसे अनेक नारे गूंज उठे। संविधान सभा की विशेष बैठक रात में 11 बजे शुरू हुई और पं0 नेहरू ने सभा में सभी सदस्यों और भारत के लोगों के प्रति समर्पित होने सम्बन्धी प्रस्ताव को रखा तथा मुस्लिम लीग के चौधरी खलीफ–उज–जिमान ने प्रस्ताव का अनुमोदन किया। सभा की बैठक की अध्यक्षता डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद जी ने की। शुरूआत 'वन्दे मातरम्' के गान से हुई, जिसे सुचेता कृपलानी व नंदिता कृपलानी ने गाया था। पं0 नेहरू ने देशवासियों को सम्बोधित करते हुए कहा था, "आधी रात को जब सम्पूर्ण विश्व सो रहा होगा, तब भारत जागेगा, उसे आजादी मिलेगी। इतिहास में कुछ क्षण ऐसे होते हैं जो बिरले ही आते हैं, जब हम प्राचीनता से नवीनता की ओर अग्रसर होते हैं, जब एक युग समाप्त होता है और चिरकाल से दमित राष्ट्रीय आत्मा मुखर हो उठती है। आज ऐसा ही अवसर है।" डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद ने अपने अध्यक्षीय भाषण (सम्बोधन) में कहा, "हमें महात्मा गांधी का पूरी श्रद्धा और आदर से धन्यवाद अदा करना चाहिए, जो विगत 30 वर्षों से हमारे मार्गदर्शक और प्रेरणा स्रोत रहे हैं। भारत में रहने वाले अल्पसंख्यकों के साथ कोई भी किसी प्रकार की नाइंसाफी नहीं होगी, संविधान सभा इस बात की गारण्टी देती है।" इसके बाद सदन में आजादी की लड़ाई में शहीद हुए पुरूषों व नौजवानों के लिए दो मिनट का मौन रखा और इसके बाद ये लोग लार्ड माउण्टबेटन से मिलने चले गये, तब रात के 12.30 बज रहे थे। बाहर सड़कों पर हजारों लोग आजादी के नारे लगा रहे थे और खुशी में नाच–गा रहे थे। सुबह होते ही 15 अगस्त को सचिवालय से लेकर हर गांव, गली व मौहल्ले की छत पर आजादी की खुली सांस में तिरंगा लहर–लहर–लहरा रहा था। भारत व भारत के निवासी जहाँ खुश थे, वहीं पाकिस्तान खुशी कम दुखी अधिक नजर आया, क्योंकि उसकी नजर जम्मू–कश्मीर पर लगी थी। अभी चल–अचल सम्पत्तियों का विभाजन और रियासतों का भी निर्णय होना था। जब 25 जुलाई, 1947 को लार्ड माउण्टबेटन ने रियासतों के सम्मेलन में कहा कि 'प्रत्येक रियासत अपने भविष्य के निर्धारण हेतु स्वतंत्र हैं। वे पाक या भारत में मिलें या स्वतंत्र रहें, किन्तु भौगोलिक परिस्थितियों का ध्यान अवश्य रखें।' जम्मू–कश्मीर के महाराजा ने स्वतंत्र रहने का निर्णय किया किन्तु शीघ्र ही संकटों के जाल में उलझ गये, क्योंकि मुहम्मद अली जिन्ना महाराजा पर पाक में विलय करने हेतु दबाव बढ़ाते चले गये, जिसका परिणाम युद्ध के रूप में सामने आया।

यहीं से कश्मीर विवाद की दाश्तान शुरू होती है जो खत्म होने का नाम नहीं ले रही है। इसकी सच्चाई को इस प्रकार देखा जा सकता है–

कश्मीर सत्य के आइने में : 1947 से पूर्वः— कश्मीर को लेकर विगत कई वर्षों से समय–समय पर यह मांग उठती रही है कि कश्मीर को पूर्ण स्वायत्ता का दर्जा दिया जाये। फारूख अब्दुल्ला इसके सबसे बड़े व अहम पेरोकार रहे हैं। कुछ हिन्दुवादी संगठन मांग करते रहे हैं कि जम्मू–कश्मीर व लद्दाख को अलग–अलग राज्य घोषित कर दिया

Scanned by CamScanner

जाये या लद्दाख को केन्द्र शासित प्रदेश घोषित कर जम्मू व कश्मीर को स्वतंत्र राज्य बना दिया जाये। यह अभी भविष्य के गर्भ में है कि क्या होगा? किन्तु हम यदि अतीत के इतिहास के पन्नों की गर्द झाड़कर सत्य के चश्मे और तटस्थ भाव से देखे तो सच्चाई स्पष्ट नजर आ जायेगी।

हिमालय की ऊँची–ऊँची चोटियों से घिरी कश्मीर की सुरम्य घाटी न केवल अपनी मनमोहक नैसर्गिक सुन्दरता (पृथ्वी का स्वर्ग) के लिए अपितु भारतीय संस्कृति व पर्यटन के समृद्ध केन्द्र के रूप में भी प्राचीन काल से प्रसिद्ध रही है जो आज बारूद के ढेर पर है। नीलमत पुराण के अनुसार कश्मीर घाटी के स्थान पहले एक विशाल झील थी। महर्षि कश्यप ने वराहमूल (बारामूला) के समीप पर्वत को काटकर उस जलराशि के निकास का मार्ग बना दिया, जिससे झील का पानी वितस्ता (वर्तमान झेलम नदी) नदी में बह जाने से झील का तल यहां–वहां कुछ छोटी–छोटी झीलों से युक्त रमणीक घाटी में बदल गया। इसे कश्यप मर्ग (वर्तमान कश्मीर) कहा गया है।[1] इसकी राजधानी श्रीनगर है जिसे मौर्य सम्राट अशोक ने बसाया था। यहीं पर द्वापर के अन्त में राजा के युद्ध में मारे जाने और युवराज के अल्पव्यस्क होने पर श्रीकृष्ण ने पुरोहितों से रानी यशोमति का राज्याभिषेक कराया था। यहीं पर कट्टर बौद्धमत हीनयान से उदार महायान मत फूला–फला था। कुषाण सम्राट कनिष्क ने बारामूला के निकट कनिष्कपुर (वर्तमान कंसपुर) नाम से महायान मत का केन्द्र स्थापित और अनेक बौद्ध विहार भी बनवाये।[2]

8वीं शताब्दी में महाराजा ललितादित्य के शासन काल में कश्मीर राज्य की श्री समृद्धि की ख्याति चारों ओर दूर–दूर तक फैली हुई थी। अतः अरब के बर्बर मुस्लिम लुटेरों ने पंजाब होते हुए कश्मीर पर आक्रमण किया और पराजित हुए तथा बन्दी बनाकर उन्हें कैद में डाल दिया गया। मध्य भारत के राजा यशोवर्मन से ललितादित्य की मित्रता थी। अतः दोनों की संयुक्त सेना ने अरब आक्रान्ताओं के प्रवेश रोक दिये और लम्बे समय तक शांति बनी रही।

13वीं शताब्दी के मध्य कश्मीर के इतिहास में घटित एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना से समय चक्र विपरीत दिशा की ओर घूमने लगा। कश्मीर का राज्य जब सुहादेव नामक राजा ने संभाला, 1286 में मंगोलों ने आक्रमण किया था। कुछ दिन राज्य करने के बाद उसकी मृत्यु हो गयी, तो राज्य की कमान उसके भाई उदयनदेव के हाथ में आ गयी, जो थोड़े समय तक ही जीवित रहा। अब महारानी कोटा रानी ने अपने अल्पवय पुत्र के नाम पर स्वयं शासन संभाल लिया। महारानी कोटा रानी के दरबार में शाहमीर नामक एक खुरासानी (स्वात) मुस्लिम दरबारी था, जिसने धीरे–धीरे शासन सत्ता में पकड़ मजबूत कर ली थी। शाहमीर के बढ़ते प्रभाव पर किसी ने ध्यान नहीं दिया तो एक दिन उसने अपने सहयोगियों की मदद से महारानी पर विवाह का प्रस्ताव भिजवाया, जिसे ठुकरा दिया गया। उसने अवसर मिलने पर महारानी को बलपूर्वक अपने हरम में डाल दिया। दूसरे दिन उसने आत्महत्या कर ली। इस प्रकार 1339 में कश्मीर प्रथम बार मुस्लिम व्यक्ति के हाथ में चला गया। इसके बाद यहाँ मुस्लिमों का मजहबी उन्माद कहर ढाने लगा। शाहमीर के उत्तराधिकारी सुल्तान सिकन्दर ने भी घाटी में हिन्दुओं का कत्लेआम किया।[3] डल झील शवों से पट गयी थी। इसकी जब भी सफाई होती है तो अवशेष प्राप्त होते हैं। सुल्तान सिकन्दर के बाद कश्मीर राज्य सुल्तान जैनुल अवैदीन के हाथ में आ गया। 167 वर्ष यहाँ मुगल शासन रहा।[4] 1752 तक मुस्लिम वंश का राज रहा।

Scanned by CamScanner

1820 में पुनः कश्मीर पर हिन्दुओं का शासन स्थापित हुआ। कश्मीर घाटी (135×40 वर्ग किमी0) पर पहले हिन्दुओं ने फिर मुगलों ने फिर 1576 में मुगल शासक अकबर ने राज्य किया। 1819 तक पठानों ने फिर 1819 में यह सिक्ख साम्राज्य का भाग (1846 तक) बनी। सिक्ख साम्राज्य के प्रमुख शासक महाराजा रणजीत सिंह की सेना ने जम्मू के डोगरा राज परिवार के प्रमुख व्यक्ति गुलाब सिंह सेनापति थे। साम्राज्य विस्तार में गुलाब सिंह के योगदानों का सम्मान करते हुए रणजीत सिंह ने उन्हें लाहौर दरबार के अधीन जम्मू के राजा के रूप में मान्यता दे दी। गुलाब सिंह ने अपने प्रसिद्ध सेनापति कर्नल जोरावर सिंह की मदद से सम्पूर्ण लद्दाख को जीत कर जम्मू राज्य की सीमायें चीन व तिब्बत से मिला दी और विशाल साम्राज्य खड़ा किया था। इस क्षेत्र में शांतिप्रिय लोगों के लिए जोरावर सिंह देवदूत था। आतातायी लोगों के लिए वह कहर था।

इधर भारत में अंग्रेज भी अपनी प्रभुता के विस्तार में लगे हुए थे। इस दिशा में प्रभाव विस्तार में आने वाली बाधाओं को देखते हुए अंग्रेजों ने 16 मार्च, 1846 को गुलाब सिंह के साथ 'अमृतसर की संधि' के तहत 75 लाख रूपयों में सिन्धु नदी के पूर्व या रावी नदी के पश्चिम का सम्पूर्ण क्षेत्र इस उद्देश्य से बेच दिया कि डोगरा राजा लाहौर दरबार के विरूद्ध अंग्रेजों को सामरिक मदद देगा, क्योंकि वे जम्मू–कश्मीर राज्य को लाहौर दरबार से पृथक मानते हुए महाराजा को स्वतंत्र शासक भी स्वीकार करते थे। इस प्रकार महाराजा गुलाब सिंह का सम्पूर्ण जम्मू, कश्मीर, मीरपुर, मुजफ्फराबाद, गिलगित वालटिस्तान आदि पर 1848 तक पूर्णतः अधिकार हो गया।[5] लेकिन शीघ्र ही 2 वर्ष के बाद अंग्रेजों को अपनी भूल का एहसास हुआ तो उन्होंने महाराजा के दरबार में एक अंग्रेजी सैन्य रैजीडेंट स्थापित करने का प्रयास किया, जिससे दरबार की स्थितियों व वास्तविक कार्यवाहियों का पता लग सके। अंग्रेजों का मुख्य उद्देश्य गिलगित को प्राप्त करना था, लेकिन उन्हें महाराजा गुलाब सिंह व रणवीर के कार्यकाल में सफलता नहीं मिली। सफलता मिली महाराज प्रतापसिंह के काल में अर्थात् 1885 में।

1857 के स्वाधीनता आन्दोलन की विफलता के बाद 1858 में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का सम्पूर्ण कार्य भार सीधे ब्रिटिश ताज के हाथ में आ गया था। अतः अंग्रेजों को गिलगिट जैसे सामरिक दृष्टि के महत्वपूर्ण क्षेत्र की आवश्यकता थी, क्योंकि इस दिशा से रूस अधिक व अफगानिस्तान कम उनके लिए खतरे के संकेत थे। महाराजा प्रतापसिंह अधिक कूटनीतिज्ञ व दूरदर्शी नहीं थे। फलतः अंग्रेज महाराज के दरबार में अंग्रेजी रैजीडेंट रखने में सफल हो गये। 1889 में यह क्षेत्र गिलगिट एजेन्सी के नाम से अंग्रेजों के प्रशासनिक नियंत्रण में आ गया। स्वाधीनता की आंधी देश में जोर से चल रही थी। अतः जहाँ 1925 में प्रथम महायुद्ध के बाद काकोरी रेल काण्ड हुआ वहीं जम्मू–कश्मीर में नये महाराजा हरीसिंह राजा बने तो उन्होंने गिलगिट से अंग्रेजी रैजीडेंट हटाकर अपने सैनिक तैनात किये और साथ ही श्रीनगर स्थित ब्रिटिश रैजीडेंट के निवास से यूनियन जैक का झण्डा हटाकर अपना झण्डा फहरा दिया। इससे अंग्रेज चिढ़ गये और महाराजा के विरूद्ध षडयंत्र रचने लगे। 1930 के बाद लन्दन में गोलमेज सम्मेलन में भारतीय रियासती राजाओं की ओर से महाराजा हरीसिंह ने भाग लिया और अपने तीखे भाषणों से ब्रिटिशसत्ता का खुलकर विरोध किया, जिससे अंग्रेज और अधिक चिढ़ गये।

1930 के दशक में शेख अब्दुल्ला ने जन आन्दोलनों और असफल विद्रोहों को अपनी ढाल बनाया, उधर ब्रिटिश सरकार ने शासन सुधार के नाम पर 26 मार्च, 1935 को महाराजा से गिलगिट एजेन्सी का 60 वर्ष के लिए पट्टा ले लिया। 1931 में

Scanned by CamScanner

अब्दुल्ला ने कश्मीरी पंडितों से स्पष्ट कहा था कि 'या तो भाग जाओ या मुस्लिम बन जाओ या मर जाओ।' इस प्रकार शेख की बढ़ती भूमिका को देख अंग्रेजों ने उसे अपना मुहरा बनाया और महाराजा के विरूद्ध षडयंत्र तेज कर दिये। 1939 में कांग्रेस का समर्थन पाने के लिए अब्दुल्ला ने मुस्लिम कांग्रेस का नाम बदल कर नेशनल कांग्रेस कर दिया।

इधर सितम्बर, 1939 में द्वितीय महायुद्ध शुरू हो गया। 4 सितम्बर, 1939 मोहम्मद अली जिन्ना ने लार्ड लिनलिथगो से मुलाकात कर भारतीय ब्रिटिश सेना में मुस्लिम सिपाहियों की ब्रिटेन के प्रति वफादारी का विश्वास दिलाया। उस समय सेना में मुस्लिम सिपाहियों का अनुपात 40 प्रतिशत था। इसके साथ ही जिन्ना ने मुस्लिम नौजवानों को फौज में भर्ती होने के लिए प्रोत्साहित कर अंग्रेजों की मदद की। 23 मार्च, 1940 को मुस्लिम लीग ने भारत के मुस्लिमों के लिए अलग स्वतंत्र राज्य की मांग का प्रस्ताव किया, जिसका समर्थन खालिक–उल–जमन के माध्यम से जिन्ना ने तत्कालीन राज्य सचिव लार्ड जैलैण्ड से प्राप्त कर लिया था। इससे स्पष्ट होता है कि मुस्लिमों ने अंग्रेजों के सहयोग से भारत के विभाजन की तैयारी करली थी। 1857 के विद्रोह के बाद अंग्रेजी शासन भारत में पूर्णतः स्थापित हो गया था। अनेक चिंतकों के मन में यह विचार आने लगे कि जब अंग्रेज भारत छोड़कर जायेंगे तो यहां का राजनीतिक व भौगोलिक मानचित्र कैसा होगा? इसका अनुमान एक अंग्रेज लेखक **जॉन ब्राइट** ने 1877 में लगाया कि जब अंग्रेज भारत से हटेंगे तो यहां पांच या छः उत्तराधिकारी सरकारें आयेंगी। यही विचार स्वाधीनता के समय अंग्रेजों के मन में आया कि वे देश की सत्ता विभिन्न राज्यों की सरकारों को देकर चले जायें। इसका कांग्रेस ने भारी विरोध किया था।[6]

Scanned by CamScanner